संग्रहालय का प्रादुर्भाव और विकास

सार्वजनिक संस्था के रूप में संग्रहालय का प्रादुर्भाव यद्यपि आधुनिक युग की देन है , किन्तु इसकी परम्परा किसी न किसी रूप में प्राचीन काल से विद्यमान रही है । चेतन प्राणी में संचयन की प्रवृत्ति स्वभावतः होती है । चूहे , गिलहरी आदि जानवर भी सामग्रियों को अपने बिलों , घोसलों में संचित करके रखते हैं । मानव भी उपयोगी और आकर्षक वस्तुओं का संग्रह करता रहा है । जब वह संचयित वस्तुओं को सुरक्षित रूप से एक निश्चित स्थान पर रखता है , उसको सबकी जानकारी , अध्ययन और आनन्द के लिए सार्वजनिक रूप से व्यवस्थित करता है तो वह स्थान संग्रहालय के रूप में जाना जाता है । इसके विधिवत संग्रहीत करके रखने की विधि को संग्रहालय विधि कहते थे , जिस विचारधारा में अब परिवर्तन आया है । संचयागार से संग्रहालय भिन्न होता है । संचयागार में वस्तुओं को एकत्रित कर उनका भण्डारण कर लिया जाता है जबकि संग्रहालय की संपूर्ण क्रियाएँ दर्शक प्रधान होती हैं और उन्हीं की सुविधाओं को ध्यान में रखकर सारे क्रिया कलाप व्यवस्थित होते हैं । जनता की वस्तुओं से निर्मित जनता के लिए जनता की धरोहर के रूप में संग्रहालय है जहाँ न केवल वस्तुओं को भविष्य के लिए संरक्षित रखा जाता है बल्कि ज्ञान तथा आनन्द के लिए व्यवस्थित किया जाता है ।

आधुनिक संग्रहालय की अवधारणा में बहत अंतर आया है और वह प्राचीन अथवा आकर्षक वस्तुओं का निष्क्रिय संग्रह नहीं रह गया है । आज संग्रहालय कला और संस्कृति तथा सभ्यता के संग्रह और संरक्षण मात्र से संबंधित नहीं रहकर , मानव के सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास में मानव की रचनात्मक प्रतिभा और प्रकृति पर उसके नियंत्रण के वास्तविक उदाहरणों को प्रदर्शित करके जीवंत भूमिका निभा रहे हैं । ऐसी वस्तुओं का संग्रह और संरक्षण निसन्देह रूप से उनका एक कार्य है , किन्तु उनका विश्लेषण और आधुनिक समाज के विकास के लिए उनका प्रयोग कम महत्वपूर्ण नहीं है । प्रदर्शन में ध्यान वस्तु से वातावरणीय महत्व पर इतना स्थानांतरित हुआ कि एक वस्तु अकेले महत्वपूर्ण नहीं रह गयी जब तक कि उसे अपने वातावरण में प्रदर्शित नहीं किया जाय और उसकी प्रस्तुति ऐसी हो जिससे वह अपनी कहानी कह सके । आज के प्रगतिशील संग्रहालय प्रयासरत हैं अपनी विषयवस्तु की कहानी कहने में , सीधे निर्देश प्रदान करने में और दर्शकों को देखकर तथा अनुभव करके ज्ञान प्राप्त कराने में , जिसके लिए वह संग्रह , संरक्षण और विश्लेषण करता है । संक्षेप में कहा जाय तो आज के संग्रहालय कार्यशाला है जहाँ वस्तुएँ संग्रहीत और प्रदर्शित की जाती हैं , एक स्कूल है जहाँ वस्तुएँ पढ़ायी जाती हैं , उच्च ज्ञान की अकादमी है और सांस्कृतिक आनन्द का स्थल है जहाँ दर्शक थकान मिटा सकता है , आनन्द प्राप्त कर सकता है , उत्सुकता को शांत कर सकता है और वह वहद अनुभव प्राप्त कर सकता है , और भावी योजनाओं के निर्धारण में इस अनुभव और समझ का उपयोग कर सकता है ।

आरंभिक अवस्था में प्राचीन और दुर्लभ वस्तओं का संचयगृह समझा जाने वाला संग्रहालय सक्रिय और व्यावहारिक ज्ञान का माध्यम और सामाजिक संस्था के रूप में परिणत हो गया है । अब यह ज्ञान केन्द्र , वैचारिक पृष्ठभूमि , नवीन रुचियों की पूर्ति और दृश्य शिक्षा के एक सशक्त स्रोत के रूप में स्वीकार किया जाता है , जहाँ मूर्त सामग्रियों के द्वारा शिक्षित और अशिक्षित सभी समझ के अनुरूप ज्ञान प्राप्त करते हैं । संग्रहालय में शिक्षित , विद्वान , अध्यापक , अध्येता के समान अनपढ़ और अशिक्षित भी ज्ञान लाभ करने , कौतुहल को शांत करने , मनोरंजन तथा समय व्यतीत करने के लिए पहुंचते हैं । इसका महत्व शिक्षा , समाज , परंपरा को जीवंत रखने , पड़ोसी पर्यावरण के बीच सह संबंध स्थापित करने , कलात्मक रूचि , के जागरण पूर्वजों से संबंधित ज्ञान की वृद्धि और अनुभव पर आधारित नवीन नीतियों की तलाश में विशेष रूप से है । इसमें तत्कालीन परिधान विधि , समाज की मानसिक रूचि और भावनाओं , सामाजिक जीवन और परंपराओं , धार्मिक भावनाओं का प्रत्यक्षीकरण होता है , वैज्ञानिक और तकनीकी प्रयोग , मौलिक शोधकार्य और अध्ययन को प्रेरित करता है तथा उसके परिणामों के प्रकाशन को संभव बनाता है । अध्यापक के लिए यह सहायक सामग्री का कार्य करते हैं । जनसामान्य के सांस्कृतिक धरातल के उन्नयन में संग्रहालय अहं भूमिका निभा रहे हैं । स्थानीय और क्षेत्रीय इतिहास , पर्यावरण , भौगोलिक स्थिति , आमोद - प्रमोद के साधन , विश्वास , व्यवसायों

आदि का ज्ञान प्राप्त होता है । अतीत की जानकारी वर्तमान के उन्नयन और भविष्य की योजना निर्धारण के लिए उपयोगी है । नवयुग के निर्माण की पीठिका अतीत के अनुभव पर बनती है । संग्रहालय को देखने के लिए दर्शक और पर्यटक आते हैं और लाभान्वित होते हैं । यह तभी संभव है जब प्राचीन सामग्रियों का संकलन कर उन्हें संरक्षित रखा जाय । एक अच्छे तथा सुव्यवस्थित संग्रहालय के द्वारा समाज तथा जनता का सांस्कृतिक उत्थान संभव है । एस . टी . सत्यमूर्ति ने संग्रहालय को सूचना का आगार और कभी समाप्त नहीं होने वाली ज्ञान की खदान बताया है ।

विकास - संग्रहालय की प्राचीन मान्यता आधुनिक अवधारणा से भिन्न है और विश्लेषण से इसके विकास के विविध स्तरों का ज्ञान होता है जैसे भण्डारण चरण , कुछ लोगों की सेवा का चरण , जन समुदाय के शिक्षण का माध्यम । अब संग्रहालय सामग्रियों के संग्रह और विद्वानों के शोध का केन्द्र मात्र नहीं रह गए हैं , बल्कि वह अपने दृश्य विधान से विविध प्रकार की शिक्षा प्रदान करते हैं । जन समुदाय चाहे वह शिक्षित हो या अशिक्षित वह संग्रहालय से ज्ञान लाभ और आनन्द प्राप्त करता है । यद्यपि संग्रहालय के अतीत पर विचार किया जाय तो विदित होता है कि आरभ में संग्रहालय म्यूजेज के मंदिर के रूप में शहर में एक विशाल भवन में स्थापित थे जो कालातर में शोध और शिक्षा के केन्द्र के रूप में कार्यरत हुए , फिर भी संग्रहालय का मूल उद्देश्य धार्मिक रहा । ऐसा प्रतीत होता है कि वस्तुएँ उनसे संबंधित नहीं थीं , जिस कारण उनका संग्रह नहीं किया गया था ।

ईसवी पूर्व चतुर्थ शताब्दी के प्रथमार्ध (ईसवी पूर्व 334 - 323) में सिकन्दर के पर्सिया मिश्र और पंजाब में विजय अभियान के समय तक संग्रहालय का इतिहास निर्धारित किया जाता है । सिकन्दर के विजय अभियान में सम्मिलित विद्वान प्राकृतिक इतिहास की सामग्रियाँ एकत्रित करके अरस्तु को अध्ययन एवं शोध के लिए भेजते थे । सिकन्दरियों में इन सामग्रियों से शिक्षा केन्द्र स्थापित हुआ । 283 ईसवी पूर्व में सिकन्दरिया में टालमी द्वारा एक म्यूजियम स्थापित किया गया जिसे प्रायः प्रथम संग्रहालय के रूप में जानते हैं । यहाँ मूर्तियाँ तथा धार्मिक वस्तुएँ , दान सामग्रियाँ , खगोल यंत्र तथा शल्य सामग्रियों , शारीरिक अवयव जैसे हाथी दांत पशुओं के चमडे आदि संग्रहीत थे , जो चौथी शताब्दी ईसवी तक बने रहे । यह शिक्षा केन्द्र , व्याख्यान , विचार - विमर्श , भाषण आदि के लिए ख्याति प्राप्त था । यहाँ टालेमी , प्लिनी , हेरो , आर्केमेडिज , इरेस्टोथिनीज जैसे विद्वान आए । असीरिया के पुस्तकालय भी संग्रहालय के रूप में जाने जाते थे । प्राचीन क्लासिकल ग्रीक एवं रोम में व्यक्तिगत संग्रह का लोकप्रिय विचार प्रचलन में था । ग्रीक कवि होमर से प्लुटार्क तक (ईसवी सन् 50 से 120 तक) के लेखन में इनके संदर्भ उपलब्ध हैं । आगस्टस सीजर (ईसवी पर्व 100 - 34) ने भी प्राचीन वस्तुओं और अद्भुत सामग्रियों का संग्रह कर रखा था । डेल्फी और ओलम्पिआ के पूजाघरों में मूर्तियाँ और विजय चिन्ह संग्रहीत थे ।

मध्यकालीन यूरोपीय इतिहास में , राजनीतिक और सांस्कृतिक जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले महापुरूषों के स्मृति शेष के रूप में व्यवस्थित ' स्मृति शेष गृह ' संग्रहालय के रूप में जाने जाते थे । उस समय राजा , सामंत , धनाढ्य , चर्च के उच्चाधिकारी उत्खनन कराते थे तथा सोने चांदी के बर्तन , सिक्कों , अलंकृत आभूषण , पदक , उत्कीर्ण हाथी दाँत , आभूषण जटित अस्त्र - शस्त्र , बहुमूल्य वस्त्र , धार्मिक मूर्तियों , अद्भुत वस्तुओं आदि का संग्रह करते थे । सर्वेक्षक एवं व्यापारी खनिज , पौधों , जानवर , हाथी दाँत विजय चिन्ह भारत से ले जाते थे । प्राकृतिक और कृत्रिम वस्तुओं का संग्रह करना राजकुमारों और धनाढ्य व्यक्तियों का शौक बन गया था । राजपुरुषों तथा धनवानों के वैभव एवं शक्ति प्रदर्शन का यह माध्यम बन गया । मध्यकालीन यूरोप की आरंभिक अवस्थाओं में यह संग्रह दुर्लभ वस्तुओं का घर समझे जाते थे । कुछ परिवर्तन विचारधारा में भी दिखायी पड़ता है । जहाँ पूर्व में वह प्रधानतः वस्तुओं के संग्रह से संबंधित था वहीं अब संग्रहकर्ता , उनके मित्र , विद्वान और विशिष्ट व्यक्ति संग्रह को देखकर अपनी जिज्ञासा को शांत कर सकते थे । संग्रह जिज्ञास व्यक्तियों द्वारा उसी समझ के साथ किया गया जैसा वह स्वयं के लिए , विद्वान के लिए तथा दूसरों के लिए उन्हें प्रदर्शित करने के लिए उचित समझते थे । यह सत्य है कि इन्हीं राजकुमारों या प्रतिष्ठित व्यक्तियों के संग्रह से यूरोप के अनेक संग्रहालयों का उद्भव हुआ , किन्तु अमेरिका , ग्रेट ब्रिटेन , जर्मनी जैसे देशों में सैकड़ों संग्रहालय

प्राथमिक , माध्यमिक एवं महाविद्यालयी शिक्षा के लिए स्थापित हुए थे ।सिकन्दरियां का टालेमी का अदभुत संग्रह अपने विश्वकोषीय प्रवृत्ति के कारण शोध सस्थान या विश्वविद्यालय कहा जा सकता है , किन्तु वर्तमान सदर्भ में उसे संग्रहालय नहीं कहा जा सकता ।

आधुनिक जन संग्रहालय की श्रेणी में मध्यकालीन यूरोपीय राजकुलों की आलमारियों या कक्षों में बन्द बहमल्य खजाने भी नहीं आते । वे उन व्यक्तियों की सामाजिक प्रतिष्ठा और सौन्दर्य परकता के प्रतीक हैं जिन्होंने उनका संग्रह किया है । वह उन्हें विशिष्ट अवसरों पर अपने इष्ट मित्रों या महत्वपूर्ण व्यक्तियों के लिए खोलते थे । फिर भी , यह संग्रह सामान्य मानव के लिए नहीं थे तथा इनके संग्रह में किसी विशेष योजना का अभाव था । यह उद्देश्य को अस्पष्टता और जन समुदाय से वस्तुओं को छिपाकर रखने की प्रवृत्ति संग्रहालय इतिहास में लंबे समय तक चलती रही । ऐसी स्थिति में , उस समय संग्रहालय विशिष्ट वर्ग और विद्वानों के उपयोग तक सीमित था । भारत में भी आरंभिक संग्रहालय राजकुलों या व्यक्तियों के संग्रह के रूप में थे । जन सामान्य के लिए यह संग्रह अजायबघर के रूप में थे। पुनर्जागरण युग 15वीं शताब्दी , में संग्रहालय का प्रयोग वस्तुओं के संग्रह के अर्थ में हुआ । दुर्लभ सांस्कृतिक और प्राकृतिक वस्तुओं की तलाश का कार्य बढ़ा । प्राकृतिक , कला और विलक्षण वस्तुओं का संग्रह संग्रहालय कहलाया । संग्रहालय के तीन मुख्य कार्य हुए संरक्षण , शोध और सूचना । इनमें , अमेरिकी संग्रहालय का बल संरक्षण पर था , जबकि यूरोपीय संग्रहालय शिक्षा पर अधिक बल देते थे । इस काल में व्यक्तिगत संग्रह ने नवीन भूमिका ग्रहण की । संग्रहकर्ता वस्तु को सम्पत्ति के रूप में कम और ज्ञान तथा आनन्द के सोत के रूप में अधिक समझकर , इनका संग्रह करता था । अपने संग्रह को उन्होंने भण्डार से कमरे में स्थानांतरित किया जहाँ अध्येता उसकी प्रशंसा और अध्ययन कर सके । इस नवीन इच्छा से प्रभावित होकर संग्राहक क्लासिकल ग्रीक और रोम की संस्कृति को प्रकाशित करने वाली वस्तुओं की ओर आकर्षित हुआ तथा रोम के खण्डहरों से मूर्तियों को खोजने का कार्य प्रारभ हआ । वे ऐसी वस्तुओं के प्रति भी आकर्षित हए जो प्रकृति के आश्चर्य थे । संग्रह की प्रशंसा बढ़ने पर वे जीवित प्रतिभावान कलाकारों तथा शिल्पियों की वस्तुओं का भी संग्रह करने लगे । सामग्रियों की बढ़ती संख्या के कारण इन्हें सजाकर रखने का कार्य प्रारंभ हुआ तथा विशिष्ट यात्रियों और मित्रों को इन्हें दिखाए जाने का क्रम आगे बढ़ा । कला और प्रकृति की बड़ी सामग्रियों को अब छोटे सामान्य कमरे में रख पाना संभव नहीं था । इसके लिए महलों में लम्बे तथा प्रकाश युक्त कमरे बने जहाँ प्रदों को ठीक से प्रदर्शित किया जाना संभव हुआ । संग्रह में वृद्धि के साथ विद्वानों को उनके अध्ययन के लिए आमंत्रित किया गया और उनके अध्ययन को प्रकाशित किया गया । किन्तु इस काल में भी जन प्रदर्शन की दिशा में प्रगति नहीं हुई । महल और चर्च प्रमुख स्थल थे जहाँ लोग कला और दुर्लभ वस्तुओं को किसी तरह देख पाते थे । 16वीं - 17वीं शताब्दी में संग्रहालय राजवाडों द्वारा संचालित थे । इसमें दर्शक को प्रवेश की सुविधा थी , किन्तु वह संग्रहों को देखकर मात्र उनकी प्रशंसा कर सकता था , आलोचना या सुझाव नहीं दे सकता था । अधिकांश बड़े संग्रहालयों का उद्भव निजी विद्वान , धनाढ्य और राजाओं के संग्रह से हुआ । ये संग्रह अंततः जनता के लिए खोल दिए गए और सग्रहालय पर वर्तमान संग्रहालय के रूप में विकसित हुए । एलियास अश्मोले ने ट्राडेसकाण्ट के संग्रह को अपने संग्रह में जोड़ा और उन दोनों को आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय को सौंप दिया ।

1683 ईसवी में अश्मोलीन संग्रहालय विश्व के प्रथम जन संग्रहालय के रूप में आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में स्थापित हुआ । यद्यपि , यह एक शोध संस्थान था जिसमें जनसामान्य की भागीदारी बहुत कम थी । पोप बेनेडिक्ट XIV ने बैटिकन में प्रथम ईसाई संग्रहालय बनाया । सर हंस स्लोन (1666 - 1753 ईसवी सन्) के संग्रह से उनके मृत्युपरांत पहला ब्रिटिश संग्रहालय बना । 1753 ईसवी में ग्रेट ब्रिटेन की संसद ने उस संग्रह को 20 , 000 पौंड में खरीदा और उसी वर्ष संग्रहालय बनाया गया जिसे जनता के लिए औपचारिक रूप में 15 जनवरी 1759 को खोला गया । आरंभ में , संग्रहालय के कार्यालय में पत्र भेजने पर जाँच के बाद संग्रहालय देखने के लिए टिकट जारी किए जाते थे । इसे 1808 ईसवी में सोमवार से बृहस्पतिवार तक 11 से 12 बजे तक के लिए खोल दिया गया । वस्तुओं के साथ लेबल नहीं लगे होने और क्यूरेटर द्वारा दर्शकों के अनेक प्रश्नों का जवाब देने में समर्थ नहीं होने की स्थिति में संग्रहालय गाइडबुक ही उनकी एकमात्र निर्देशिका थी ।

अमेरिका का प्रथम जन संग्रहालय कारोलिना के चार्लेस्टन में 1773 ईसवी में बना । 1776 ईसवी में स्पेन में प्राकृतिक विज्ञान का राष्ट्रीय संग्रहालय स्थापित हुआ । फ्रांस के लाउने राजमहल में संग्रहालय 1793 ईसवी में खुला । 1830 ईसवी में बर्लिन में एटलस संग्रहालय , वाशिंगटन में स्मिथ सोनीया संस्थान 1846 ईसवी में स्थापित हुए । 1870 ईसवी के मध्य अमेरिका में 200 संग्रहालय थे । जापान का राष्ट्रीय संग्रहालय टोक्यो में 1872 ईसवी में तथा स्वेडिस जनता के आरंभिक जीवन से संबंधित लोक संग्रहालय 1873 ईसवी में स्टाकहोम में बना ।

आधुनिक संग्रहालय के विकास का इतिहास 200 वर्ष प्राचीन है । सामान्यतया 18वीं शताब्दी के मध्य और 19वीं शताब्दी के प्रारंभ में जन संग्रहालय की विचारधारा यूरोपीय समाज में उभरी । पुनर्जागरण की भावना , सभी प्रकार से ज्ञान अर्जन करना , ने दृश्य पद्धति से ज्ञान अर्जन में संग्रहालय की भूमिका के विकास में योगदान दिया । सांस्कृतिक जागरूकता और ज्ञानपिपासा से 18वीं शताब्दी के अंत में संग्रहालय की संरचना में अंतर आया । श्रेण्ययुग औद्योगिक उद्भव से दबा । पाल ट्रैपेनियर और लक नोपेन के शब्दों में संग्रहालय प्राकृतिक और वैज्ञानिक वस्तुओं का ग्रहणकर्ता बन गया । ध्यान अब सौंदर्य से मानव और जीवों के

उद्भव पर स्थानान्तरित हुआ । यह काल ऐतिहासिक और पुरातात्विक संग्रहालयों के उद्भव के लिए याद किया जाता है । बदलता समाज अपने विगत सोच को नियमित करने में प्रयासरत हुआ । इवो मरोएविक के अनुसार संस्थान के रूप में संग्रहालय 19वीं शताब्दी की देन है । मिश्र , पर्सिया , भारत , चीन आदि सभ्यताओं की खोज ने विश्व सभ्यताओं के प्रति अत्यधिक प्यार उजागर किया । अब वस्तुएं आश्चर्य का विषय नहीं रह गयीं । जन सामान्य के लिए उसका महत्व उजागर हुआ । इस सोच के कारण निजी संग्राहकों ने भी अपना संग्रह जनता के लिए खोल दिया । यद्यपि 18वीं - 19वीं शताब्दी में संग्रहालयों ने अधिक व्यक्तियों के बीच चेतना जागृत की लेकिन उसके दर्शक प्रायः सामत समाज से ही आते रहे । फिर भी संग्रहालय के उद्देश्य में तकनीकी विकास दिखता है । किसी भी या सभी वस्तुओं के संग्रह में अंतर आया और निश्चित उद्देश्य से किए गए संग्रह के परिणामस्वरूप विविध प्रकार के संग्रहालय प्रकाश में आए । प्रस्तुतिकरण में भी अंतर परिलक्षित हुआ । वस्तुओं का क्रमबद्ध तथा उद्देश्यपूर्ण प्रदर्शन प्रारंभ हुआ । 20वीं शताब्दी में हुए डेविड मूरे का विचार है कि एक संग्रहालय जैसा अब समझा जाता है , पुरा स्मारकों का संग्रह या अन्य विद्वानों और वैज्ञानिकों की उपयोगी वस्तुओं की वैज्ञानिक पद्धति से व्यवस्था और प्रदर्शन है । इसके बाद भी , आज के अनेक संग्रहालयों में सामग्रियाँ अधिक है तथा प्रदर्शन में कोई योजना नहीं दिखायी पड़ती । प्रथम विश्वयुद्ध के बाद यूरोप और अमेरिका के संग्रहालयों में सुधार को और आगे बढ़ाया गया । परिणामतः संग्रहालय के बनाने की योजना , भवन और प्रस्तुतिकरण में नवीनता आयी । सांस्कृतिक पुनर्निर्माण में संग्रहालय की अहं भूमिका स्वीकार की गयी । जन समुदाय को आकर्षित करने का प्रयास हुआ । संग्रहालय का उद्देश्य शिक्षा बन गया । नवीन संग्रहों के साथ भिन्न प्रकार के संग्रहालय विकसित हुए । द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद विकास और तेज हुआ । 20वीं शताब्दी के प्रथम दशक में केवल प्रदर्शन हेतु वीथियों पर बल था , भण्डार और प्रशासनिक स्थल प्रायः उपेक्षित थे । कालांतर में , केवल चयनित , जन समुदाय को समझ में आने वाली वस्तुओं को प्रदर्शन कक्ष में लगाया जाने लगा । विद्यार्थियों तथा शोधार्थियों के लिए उपयोगी अन्य वस्तुएँ भण्डार गृह में रखी जाने लगी । इससे प्रदर्शों की भीड़ में कमी आयी और वस्तुओं को कथानक के आधार पर ज्ञानपरक रूप में व्यवस्थित कर प्रदर्शित कर पाना संभव हआ । समाज के सभी वर्गों को प्रत्यक्ष ज्ञान प्रदान करने की दिशा में इस संस्था के महत्व बढ़ने से इसका आदर भी बढ़ा है । संग्रह , संरक्षण और प्रदर्शन के साथ - साथ विश्लेषण पर बल दिया गया । शोध के द्वारा वस्तुओं के विषय में अधिक से अधिक लिखा जाने लगा । इस प्रकार संग्रहालय दो प्रकार से सहायक हुए . उच्च शिक्षा एवं शोध अकादमी के रूप में तथा जनता और युवा बच्चों के लिए शिक्षा और मनोरंजन के संसाधन के रूप में । संग्रहालय के विकास क्रम में इस प्रकार प्रथम स्तर था शोध के लिए संग्रह करना जैसे सिकन्दरिया का पुस्तकालय और शोध केन्द्र । यह भण्डारगृह स्तर था । दूसरा स्तर था वस्तुओं के प्रदर्शन का । यह विकास कुछ लोगों के ज्ञान एवं आनन्द के लिए था जैसा कि लेविन विन्सेट संग्रहालय । यह विकास कुछ लोगों की सेवा के

रूप में था । 19वीं - 20वीं शताब्दी में संग्रहालय संग्रहों में से वस्तुओं के व्यवस्थित प्रदर्शन करने , जनता को आकर्षित करने और ज्ञान प्रदान की दिशा में विकसित हुए । इस स्तर में वह शिक्षा का , विशेषतः दृश्य शिक्षा का हर स्तर पर साधन बन गया । यद्यपि एक अकेली वस्तु महत्वपूर्ण हो सकती है । लेकिन वह पूर्ण अर्थ नहीं दे सकती । उनके वस्तुपरक सत्यता के मूल को जानने के लिए उनका अध्ययन उनके मूल पर्यावरण के संदर्भ में करना चाहिए । उसका पर्यावरण संदर्भ जिसमें एक वस्तु निर्मित हुई और उन लोगों के विषय में भी जिन्होंने उस वस्तु का निर्माण किया है । संदर्भ संबंधों के साथ ही वस्तु के विषय में अधिक तथ्यों को जाना जा सकता है । संग्रहालय की भूमिका समाज में प्रकट होती है उसके कार्य , संस्कृति और प्रकृति की प्रमाणिक वस्तुओं के संग्रह , उनके वैज्ञानिक संरक्षण , प्रदर्शन , शोध , विश्लेषण और ज्ञान के प्रसारण में । 20वीं शताब्दी में संग्रहालय वस्तुपरक नहीं रहकर जन परक बन गए । जनता तक संग्रहालय पहुँचा परिशीलन के लिए और उनके वर्तमान सही उपयोग को समृद्ध करने और बेहतर भविष्य के निर्माण में सहायक के रूप में । नवीन अवधरणा के अनुसार प्रथमतः संग्रहालय की वस्तुएँ पवित्रता के रूप में हैं जो अतीत के इतिहास और परंपरा के एक विशेष गुण को प्रस्तुत करती हैं । इस प्रकार पारंपरिक संग्रहालय वस्तुओं के प्रतिनायक गुणों के रूप में होने के संदर्भ में केन्द्रित जान पड़ते हैं । द्वितीयतः संग्रहालय खजाने और दर्पण के रूप में जान पड़ते हैं । खजाना क्योंकि वह अत्यधिक महत्वपूर्ण और पवित्र वस्तुओं का भण्डार है और दर्पण इसलिए क्योंकि वह विश्व के गुणों को दर्शाता है । तृतीयतः वह सामाजिक संदर्भो में परंपरा और विज्ञान है । परंपरा सामाजिक आधार प्रदान करता है और विज्ञान समाज तथा प्रकृति की वास्तविकता की समझ और अभिव्यक्ति को बढ़ाता है ।

भारत में संग्रहालय विकास

भारत में संग्रहालय विकास का इतिहास रोचक है । आदि मानव की संचयी प्रवृत्ति का ज्ञान कन्दराओं , शैलाश्रयों और सर्वेक्षण तथा उत्खनन से ज्ञात पुरातात्विक सामग्रियों से हाता हा रामायण में दशरथ और रावण के महलों का जो वर्णन हुआ है उसमें उनके कमरों में पूर्वजों और देवताओं की मूर्तियों तथा शस्त्रास्त्रों को संग्रहीत करने की चर्चा है । इसके लिए चित्रशाला शब्द का प्रयोग किया गया है तथा इसके तीन प्रकार बताए गए हैं 1 . महल चित्रशाला (शयन चित्रशाला , अभिषेक चित्रशाला) जिसका उद्देश्य था जगने पर मांगल्य लाख कदशन , 2 . व्याक्तगत चित्रशाला जिसमें इच्छानुसार नीतक या अनीतक चित्रों का समायोजन किया जाता था । बाणभट्ट ने देव , असुर , गंधर्व आदि चित्रों के अंकन की बात यहाँ की है । नव सासांक चरित में जलक्रीड़ा , पानगोष्ठी , रासलीला आदि चित्रों को सजाने की चर्चा है । 3 . जन चित्रशाला जिसमें जन रुचि के अनुसार मंदिर , बैठकों आदि स्थानों पर चित्रा का नियाजित किया जाता था । सकटा पर घूमने वाला चित्रशालाओं का भी उल्लेख संस्कृत ग्रन्थों में हुआ है । विद्या मंदिरों में भी सरस्वती , यमलोक , नाट्य शालाओं के आलेखन का उल्लेख है । सूतिका गृहों को भी चित्रों से सजाया जाता था । चित्रों के घर चित्रशाला के नाम से जाने जाते थे । चित्रशाला में चित्रों के अतिरिक्त कलावस्तु एवं मूर्तियाँ प्रदर्शित की जाती थी । केरल के त्रिवेन्द्रम में श्री चित्रालयम है । भवभूति ने वीथि शब्द का प्रयोग लम्बे विस्तृत कक्ष के लिए किया है । बाणभट्ट ने चित्रवीथि के लिए विमान पंक्ति शब्द का प्रयोग किया है । नारद शिल्प में चित्रशाला भवन के विविध वर्णन है । भाष के प्रतिमा नाटक में आलेख गृह शब्द का प्रयोग है । भरत ननिहाल से वापस लौटते समय आलेख गृह में जाते जहाँ अपने पिता को प्रतिमा को देखते हैं ।

मथुरा से ज्ञात कुषाण राजाओं की अनेक मूर्तियाँ अपने पूर्वजों की पूजा को आलोकित करती है तथा उनकी प्रवृत्ति पूर्वजों की मूर्तियों के संग्रह में प्रतीत होती है । स्तूप संग्रहालय के समान महत्वपूर्ण वस्तुओं का , बुद्ध के अस्थि अवशेषों का संग्रह , उनका संरक्षण करते हुए विभिन्न क्षेत्रों से पधारे श्रद्धालुओं और दर्शकों को संदेश और ज्ञान देने का कार्य करते थे । स्तूपों पर अंकित दृश्यों के साथ लेख भी लिखे हैं , जैसा कि साँची और भरहुत में , जिससे तृतीय शताब्दी ईसवी पूर्व में , सैद्धांतिक रूप में संग्रहालय होने की कल्पना की जा सकती है । आरभिक काल में संग्रहालय विश्वकर्मा गृह के रूप में जाने जाते थे । अन्य शब्द जैसे कौतुक घर , देवकुल , जादूघर ,

अजायबघर , चिडिया - खाना , मुर्दाघर , मुर्दाखाना , जिन्दाघर , सरस्वती सदन , भारती भवन , पुरातत्व सदन कला निकेतन कलाभवन , विज्ञान शाला , मुर्ति भवन भारतीय संस्कृति सदन , प्राच्य कला कक्ष भी संग्रहालय के लिए प्रयुक्त हुए हैं । नन्दलाल बोस ने जादघर चित्रशाला चिडियाखाना का संग्रहालय के समानार्थी अर्थ में प्रयोग किया है । संस्कृति ग्रन्थ ' विष्णु धर्मोत्तर पुराण ' (6ठीं शताब्दी ईसवी) में चित्रशालाओं का वर्णन है । धीरे - धीरे मंदिर की मूर्तियों , चित्रित पाण्डुलिपियों , लघु चित्रों का भी समावेश होने लगा । आलेख गृह , वीथि चित्रशाला आदि चित्रों मूर्तियों , मृणमूर्तियों की वीथिका बन गए । भाष का ' प्रतिमा नाटक ' और श्री हर्ष का नैषध चरित (12वीं शताब्दी) क्रमशः स्थायी और चल प्रदर्शन वीथियों का उल्लेख करते है , जो राजदरबारों से संबंधित थी । दृश्य श्रव्य और पट चित्र जन सामान्य के आनन्द और रस के लिए थे , जो आधुनिक संग्रहालय की विशेषता है । वर्तमान समय में बंगाली में संग्रह शाला या संग्रहालय या प्रदर्शनशाला का प्रयोग म्यूजियम के अर्थ में होता है ।

मध्यकालीन राजपूत राजाओं ने महलो , दीवारों और घरों में स्मारकों और वस्त्रों को सजाकर रखना प्रारंभ किया जो संग्रहालय की ओर बढ़ता चरण है । दिल्ली के सुल्तानों तथा - मुगल बादशाहों के महलों , हरमों और दरबारों से संग्रह की रूचि का अनुमान लगाया जा सकता है , जो क्रमशः बढ़ता ही गया । वे अपने पूर्वजों और आकर्षक तथा आश्चर्यजनक वस्तुओं को सजोकर रखते थे । 18वीं शताब्दी में यूरोपवासियों के भारत आगमन के उपरांत यहाँ की वस्तुओं के प्रति उनका आकर्षण और उन्हें संग्रह करने की प्रवृत्ति दिखायी पड़ती है । यहाँ बिखरी मूर्तियों , वनों के आकर्षक जीव जन्तु , राजवाड़ों के महलों में संग्रहीत उनके पूर्वजों की आश्चर्यजनक दैनिक जीवन की सामग्रियों , युद्ध के लिए प्रयुक्त कुछ आश्चर्य जनित नए प्रकार के वस्त्र और शस्त्रास्त्र आदि से प्रभावित होकर वे उन्हें क्रय करना , एकत्रित कर उसे अपने पास रखना चाहते थे । इसी भावना के परिणामस्वरूप निजी संग्रहालय की दिशा में प्रगति हुई । इनका महत्व भारतीय धनिकों और राजवाड़ों ने भी समझा । उन्होंने भी बेचने और फेंकने के स्थान पर उनका संग्रह करना अधिक श्रेयस्कर समझा । यह उनकी व्यक्तिगत सम्पत्ति के रूप में संग्रहीत हुई , लेकिन वे उनके रख - रखाव , सजावट , बनावट तथा प्रदर्शन और उनके महत्व से अनभिज्ञ थे । वास्तव में उनके लिए वह केवल शोभा की सामग्री थी , तथा घरों के सजावट हेत प्रयोग की जाती थी । राजवाड़ों के पुराने महलों के कक्ष तथा अंग्रेज साहबों के बंगलों की बैठक इस उद्देश्य हेतु प्रयोग हो रहे थे । राजाओं और उच्च वर्ग के महलों में चित्र और कलात्मक वस्तुएँ प्रदर्शित रहती थी जहां वह आराम के समय बैठा करते थे लेकिन वह किसी प्रकार आधुनिक संग्रहालय के अतर्गत नहीं आते । जन सेवा का भाव उनमें नहीं था , क्योंकि वह सामान्य व्यक्तियों के लिए बन्द था ।

19वीं शताब्दी में युरोप तथा अनेक शियाई देशों में जनता की भावनाओं के अनुसार तथा जनता के लिए संग्रहालयों की स्थापना प्रारंभ हुई । शिक्षा के सहायक के रूप में यह स्थापित हुए । भारत में संग्रहालयों की उन्नति 1784 ईसवी में कोलकाता में सर विलियम जोन्स द्वारा एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बगाल की स्थापना के साथ हुई । 1796 ईसवी में सोसाइटी द्वारा भवन , दानव संग्रह पर वास्तविक रूप से विचार किया जाने लगा । डेनिश वनस्पतिशास्त्री नैथानिल वालिच ने सोसाइटी के लिए एक संग्रहालय पर जोर दिया और एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल द्वारा 1814 ईसवी में पाश्चात्य आयातीत मॉडल पर भारतीय संग्रहालय (कोलकाता) की स्थापना हुई , जिसके वालिच प्रथम मानद संग्रहालयाध्यक्ष बने । इस संग्रहालय में दा विभागः (1) पुरातत्व एवं मानव शास्त्र (2) भूगर्भ विज्ञान और जतु विज्ञान , स्थापित हुए । भारतीय संग्रहालयों में इस काल में विकास दिखता है । इस विकास के चार प्रमुख कारक तत्व है (1) भारत में तत्कालीन ब्रिटिश प्रशासनिक अधिकारी की रूचि जिन्होंने संग्रहालय के महत्व को अपने देश में अनुभव किया था , (2) स्थानीय शासकों और कुलीन वर्गों का पूर्ण सहयोग जो कला और संस्कृति की वस्तुओं को संग्रहीत करने में रुचि रखते थे (3) संग्रह और बड़े संग्रहालय बनाने के लिए लोगों द्वारा दान , (4) भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण का उद्भव और विकास जिसके द्वारा साइट म्यूजियम उत्खनित स्थलों पर स्थापित किए गए तथा दूसरे संग्रहालयों को वस्तुएँ प्रदान की गयी तथा विद्वानों के लिए उनकी व्याख्या की गयी ।

1828 ईसवी में मद्रास शिक्षण संस्था ने आर्थिक भूगर्भ विज्ञान संग्रहालय स्थापित करने की इच्छा व्यक्त की जिसका कार्यभार सर्जन एडवर्ड ग्रीन वैलफोर ने ग्रहण किया और मद्रास का राजकीय संग्रहालय 1851 ईसवी में स्थापित हुआ । 1857 ईसवी तक भारतीय उपमहाद्वीप में कुल 12 संग्रहालय थे । 1857 ईसवी की क्रांति के कारण संग्रहालय विकास का मार्ग कुछ समय के लिए अवरुद्ध हुआ । 1863 ईसवी में दो संग्रहालय लखनऊ और नागपुर में स्थापित हुए । 1864 ईसवी में लाहौर संग्रहालय स्थापित हुआ । 6 संग्रहालय बंगलौर (1865 ईसवी) , फैजाबाद (1867 ईसवी) , दिल्ली महानगर पालिका संग्रहालय (1868 ईसवी) , कोलकाता आर्थिक संग्रहालय (1872 ईसवी) , मथुरा संग्रहालय (1874 ईसवी) और रायपुर संग्रहालय (1875 ईसवी) बने । 19वीं शताब्दी के अंत में कुछ और संग्रहालय त्रिचुर , उदयपुर , भोपाल और जयपुर (1887 ईसवी) , राजकोट (1888 ईसवी) , बडौदा और वेजावाड़ा (1897 ईसवी) , भावनगर और त्रिचिनापल्ली (1893 ईसवी) में स्थापित हए । कोलकाता की बगीय साहित्य परिषद चित्रशाला 1893 ईसवी में बनी । 1898 ईसवी में लार्ड कर्जन ने वायसराय बनने पर भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण को पुनर्जीवित किया एवं सर जॉन मार्शल के पुरातत्व महानिदेशक होने के साथ ही भारत में संग्रहालय के विकास में तीव्रता आयी । भारतीय पुरातत्व सर्वक्षण द्वारा सारनाथ , तक्षशिला , नालन्दा , मोहन जोदडो , हडप्पा , चम्बा , जोधपुर , खजुराहो , ग्वालियर , ढाका , अजमेर , दिल्ली किला , बीजापुर , साँची , जैसे रहे। स्थलों पर संग्रहालय स्थापित किए गए ।

भारतीय राज्यों विद्वत संस्थाओं , नागरिक सस्थाओं और नगर महापालिकाओं द्वारा भी संग्रहालय खोले गए । 1911 ईसवी में जे एफ बोगल ने उस समय तक विद्यमान 39 भारतीय संग्रहालयों की विस्तृत सूचना सहित प्रथम डायरेक्टरी तैयार की । 20वीं शताब्दी के आरंभ में वेल्स के राजकुमार और राजकुमारी के भारत आगमन पर उनकी स्मृति में मुम्बई नगर महापालिका ने प्रिंस ऑफ वेल्स म्यूजियम बनाया । सर कुरिम्ब्वाय इब्राहीम ने इस उद्देश्य के लिए 3 लाख रुपए दान में दिए । संग्रहालय 1914 में पूर्ण हुआ और 1921 ईसवी में संरक्षकों (बोर्ड ऑफ ट्रस्टी) को सौंप दिया गया । इस संग्रहालय हेतु कला और पुरातत्व की बहुत सी वस्तुएँ श्रीमती रतन टाटा द्वारा दी गयी । विक्टोरिया एवं एलवर्ट संग्रहालय , इलाहाबाद संग्रहालय , बड़ौदा का स्वास्थ्य संग्रहालय भी वहाँ की नगर महापालिकाओं की देन है ।

शिक्षण संस्थाओं और विश्वविद्यालयों में भी संग्रहालय स्थापित होने लगे । 1937 ईसवी में कोलकाता विश्वविद्यालय में आशुतोष म्यूजियम ऑफ इण्डियन आर्ट खोला गया । इसी प्रकार इलाहाबाद विश्वविद्यालय , काशी हिन्दू विश्वविद्यालय , गुरुकूल कांगड़ी विश्वविद्यालय , लखनऊ विश्वविद्यालय , सागर विश्वविद्यालय एवं अन्य शिक्षण संस्थाओं ने भी अपने यहाँ संग्रहालय खोले । ऐतिहासिक और पुरातात्विक संग्रहालयों के साथ - साथ प्राकृतिक इतिहास संग्रहालय , वनस्पति एवं वन संग्रहालय , कृषि संग्रहालय , आयुर्विज्ञान संग्रहालय , यांत्रिकी संग्रहालय तथा इसी प्रकार के अन्य विषयों से संबंधित संग्रहालय बने । पश्चिमी भारत में पुस्तकालय में ही संग्रह रखे जाते थे , जिन्हें सरस्वती भण्डार के नाम से जानते थे , जैसे सरस्वती भण्डार (कोटा) तथा सरस्वती महल (तजौर) ।

तीर्थ स्थलों में भी संग्रहालय स्थापित हुए जैसे दिगम्बर जैन संग्रहालय सोनागिरी में 1948 ईसवी में , श्री रंगनाथ स्वामी देवस्थानम संग्रहालय (तमिलनाडु में) 1935 ईसवी में , श्री वेंकटेश्वर संग्रहालय (तिरुपति में) 1950 ईसवी में , श्री मीनाक्षी सुन्द्रेश्वर मंदिर कला संग्रहालय (मदुरई में) 1966 ईसवी में ।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राष्ट्रीय स्तर के तीन संग्रहालय बने । नई दिल्ली का राष्ट्रीय संग्रहालय भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के आधिपत्य में 15 अगस्त 1949 में स्थापित हुआ , जिसे राष्ट्रपति भवन के दरबार हाल से वर्तमान भवन में 18 दिसम्बर 1960 को स्थानांतरित किया गया । कोलकाता में भारतीय संग्रहालय और हैदराबाद के सालारजंग संग्रहालय को राष्ट्रीय दर्जे का संग्रहालय घोषित किया गया । इसके अतिरिक्त अनेक पुरातात्विक संग्रहालय भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण द्वारा स्थापित हुए । कला वस्तुओं के समुचित संरक्षण एवं उपचार हेतु 1960 ईसवी में राष्ट्रीय संग्रहालय में एक प्रयोगशाला खोली गई । 1976 ईसवी में लखनऊ में

सांस्कृतिक संरक्षण हेतु राष्ट्रीय शोध प्रयोगशाला स्थापित हुई । संग्रहालय विकास की जानकारी समय - समय पर किए गए सर्वेक्षण प्रतिवेदन तथा डायरेक्ट्री से भी मिलती है । 1911 ईसवी में जे . एफ . बोगल ने उस समय तक विद्यमान 39 भारतीय संग्रहालयों की विस्तृत सूचना सहित डायरेक्ट्री प्रस्तुत की थी । भारत में प्रथम संग्रहालय 1814 ईसवी में बनने के बाद भी 1900 ईसवी तक केवल 26 संग्रहालय थे जिनकी संख्या 1911 ईसवी में 36 बतायी गयी है । तदनन्तर न्यूयार्क के काजजिए । महापालिका ने भारतीय संग्रहालयों के सर्वेक्षण और शब्दकोष (डिक्शनरी) बनाने के लिए ।

1946 ईसवी में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के अंतर्गत संग्रहालय शाखा बनी । राष्ट्रीय स्तर पर संग्रहालय कर्मियों का एक संगठन अखिल भारतीय संग्रहालय परिषद 1944 ईसवी में बना जिसके प्रथम अध्यक्ष रायबहादुर के . एन . दीक्षित और मंत्री रणछोड़ जी ज्ञानी थे । 1950 ईसवी के बाद संग्रहालयों में अप्रत्याशित बदलाव आया । संग्रहालयों की संख्या बढ़ी , विश्व के विभिन्न क्षेत्रों से प्रदर्शों का संग्रह हुआ , प्रदर्शन तकनीकी विकसित हुई और संग्रहालय प्रकारों में विविधता आयी । मरखम और हरग्रीव्स की रिपोर्ट के अतिरिक्त नूफिल्ड फाउंडेशन के लिए आर . स्केलंटस रिपोर्ट 1962 ईसवी में और यूनेस्को के लिए पी . आर . रासंस रिपोर्ट 1965 ईसवी में प्रस्तुत हुई । 1968 ईसवी में भारत सरकार ने एम . एस . रंधावा के नेतृत्व में राष्ट्रीय संग्रहालय के कार्य के परीक्षण के लिए समिति बनाई । 1969 ईसवी में मोतीचंद की अध्यक्षता में संग्रहालय के लिए राष्ट्रीय नीति बनाने हेतु समिति गठित हुई जिसने संग्रहालय कर्मियों के वेतनमान और विशिष्ट कार्यों हेतु कर्मियों का अनुमोदन किया । समय समय पर अन्य समितियाँ भी बनी जो संग्रहालयों की स्थिति और सुधार हेतु उपायों की घोषणा करती रही है ।